गांधी स्मारक निधि का मासिक मुखपत्र

संस्थाकुल

वार्षिक सहयोग राशि	:	रु. 20.00
एक प्रति	:	रु. 2.00
कुल पृष्ठ	:	12

फरवरी, 2023 वर्ष – 53 अंक – 11

दस्तावेज

निष्कपट समर्पण की उच्च मानक थीं कस्तूरबा

सरोजिनी नायडू द्वारा श्रीमती फिरोजशाह मेहता को लिखा यह पत्र 'इण्डियन रिव्यू' के फरवरी 1915 अंक में प्रकाशित हुआ था।

प्रिय श्रीमती मेहता,

मैं यह पत्र आपको इसलिए लिख रही हूं, क्योंकि मुझे अखबारों से पता चला है कि आप एक बार फिर मेरी मित्र श्रीमती गांधी की स्वदेश वापसी पर आयोजित होने वाले स्वागत समारोह की अध्यक्षता करने वाली हैं। मुझे लगता है कि यद्यपि बंबई की महिलाओं का यह विशेषाधिकार हो सकता है कि वे श्रीमती गांधी का स्वागत–सत्कार करें, लेकिन भारत की सभी महिलाओं की भी यह इच्छा होगी कि वे एक ऐसी शख्सियत के सत्कार में आपके साथ सहभागी बनें, जिसने अपनी नस्ल, साहस, समर्पण और आत्म–बलिदान के जरिए भारतीय नारीत्व की उच्च परंपराओं को प्रमाणित और परिपुष्ट किया है।

माता कस्तूरबा पुण्य–तिथि 22 फरवरी
हार्दिक श्रद्धांजलि !

मैं मानती हूं कि मैं भारत में मौजूद उन कुछ लोगों में से एक हूं, जिन्हें इंग्लैंड में श्रीमान और श्रीमती गांधी के साथ पारिवारिक जीवन साझा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। और, इस संक्षिप्त अवधि के साहचर्य के दौरान इस दयालु और विनम्र महिला के साथ की दो–तीन स्मृतियां मेरे जेहन में जीवंत हैं। कमजोर स्वास्थ्य के बावजूद अजेय शक्ति की मालकिन श्रीमती गांधी का नाम हमारे बीच हर घर का एक सुपरिचित शब्द बन गया है --एक बाल सदृश कमजोर काया और एक बलिदानी--सा अदम्य साहस।

दोनों लोग जिस दिन इंग्लैंड पहुंचे थे, मेरी उनसे पहली मुलाकात उसी दिन हुई थी। मुझे वह दिन याद है। पिछले साल अगस्त का महीना था। अपराह्न का समय, और बारिश हो रही थी। मैं सादगी की दोनों प्रतिमूर्तियों से मुलाकात करने लंदन के एक सामान्य से घर में सीढ़ियां चढ़कर ऊपर पहुंची। दक्षिण अफ्रीका का यह नेता (महात्मा गांधी) थोड़ा बीमार और थका हुआ लग रहा था। वह जमीन पर तकिए के सहारे बैठे भोजन के रूप में मेवे और फल खा रहे थे। मैं भी उसमें शरीक हो गई। उनकी पत्नी (कस्तूरबा) धीर–गंभीर लग रही थीं। सौ घरेलू उलझनों में उलझी रहने वाली बिल्कुल सामान्य गृहिणी जैसी, न कि राष्ट्रहित में सौ पीड़ाएं झेलने वाली विश्वप्रसिद्ध नायिका।

मुझे वह शानदार और रोमांचकारी क्षण भी याद है, जब पूरब और पश्चिम के अलग–अलग नागरिकता वाले पुरुष और महिलाएं उनका स्वागत करने के लिए जमा हुए थे। यह इस बात का पुख्ता प्रमाण है कि सच्ची महानता वह होती है, जो सबकी बातें करे और हर कोई उसका आदर करने के लिए विवश हो जाए। वह (कस्तूरबा) विजयोल्लास के समय भी अपने पति के बगल में ठीक उसी सहजता, निर्मलता और गरिमा के साथ बैठी दिखीं,

जिस तरह की सहजता, निर्मलता और निडरता उन्होंने मुश्किल भरे समय में दिखाई थी।

मैंने यह भी देखा है कि उनके दुर्बल मगर बहादुर हाथों ने दर्द सहते हुए भी एक विदेशी धरती पर अपने देश के सम्मान–दीप को हमेशा ऊपर उठाए रखा और उसकी रोशनी मद्धिम नहीं होने दी। एक दूसरी विदेशी धरती पर उन्होंने घायल सैनिकों के लिए कपड़े सिलने का काम किया; रेडक्रास का काम।

लेकिन एक स्मृति ऐसी है, जो मेरे लिए सबसे मुल्यवान और मार्मिक है। इसे मैं उनके प्रति अपनी निजी श्रद्धांजलि मानती हूं। और यह स्मृति उन सभी सुंदर और शानदार गुणों की न केवल पुष्टि करती है, बल्कि उन्हें पूर्ण व अलंकृत भी करती है, जिनके कारण वह अपने पति का एक आदर्श साथी और सहायिका बन पाईं। युद्ध के शुरुआती दिनों में जब वह इंग्लैंड पहुंचीं तो यह महसूस किया गया कि श्रीमती गांधी एक ऐसे पक्षी के समान हैं जिसके पंख हर समय अपने देश भारत लौटने के लिए फड़फड़ा रहे हैं, और अपने घर की उड़ान में थोड़ा और आवश्यक व्यवधान उत्पन्न होने पर भी अधीर हो उठते हैं। उनके भीतर की महिला का हृदय उनकी अपनी धरती की सुपरिचित ध्वनियों और दृश्यों के लिए तड़प रहा था और उनके भीतर की मां का हृदय अपने बच्चों के प्यारे चेहरों के लिए भूखा था।

इसके बावजूद जब थोड़े ही समय बाद उनके पति ने एक एंबुलेंस कॉर्प्स बनाकर साम्राज्य को अपनी सेवाएं देना जरूरी समझा, और उस कॉर्प्स ने तब से अबतक शानदार काम किया है, तो श्रीमती गांधी ने उनके प्रति अपने निष्कपट समर्पण के उच्च मानक का परिचय दिया। उन्होंने पति के निर्णय को स्वीकार किया और अपनी सभी प्रिय व उत्कट इच्छाओं का तत्काल त्याग कर पति के उद्देश्य को मजबूती प्रदान की। मेरी समझ से यह सती का असली अर्थ है। यह आत्मनिषेध को तत्पर ऐसी क्षमता है, जिसने मुझे नई दृष्टि प्रदान की कि किसी देश की महानता का सच्चा मानक उसकी बौद्धिक उपलब्धि और भौतिक समृद्धि नहीं, बल्कि प्यार, सेवा और त्याग का अमर अध्यात्मिक आदर्श होता है, जिसने तमाम माओं को प्रेरित और परिपक्व किया है।

मैं प्रार्थना करती हूं कि भारत के पुरुष व्यापक तौर पर यह समझने की कोशिश करें कि उनके जीवन की गुणवत्ता और चरित्र की महानता से ही हम महिलाएं अपने नारीत्व की बेहतरीन संभावनाओं को पर्याप्त रूप से पूरा करने का अवसर और प्रेरणा पाने की आशा रख सकती हैं, जैसा कि श्रीमती गांधी ने किया है।

आपकी,

सरोजिनी नायडू

(मूल अंग्रेजी से हिन्दी में श्री सरोज कुमार मिश्र द्वारा अनूदित।)

यह आवाज उठाने का वक्त है...

पिछले दिनों में कुछ ऐसा आलम था देश का कि यहां सिर्फ एक ही आदमी बोलता था, बाकी सभी चुप थे। फिर कुछ हुआ कि बहुत सारे लोग, बहुत सारी दिशाओं से निकल पड़े, बोलने लगे। एक साथ इतनी सारी यात्राएं शायद ही कभी हुईं हों – छोटी–बड़ी कई यात्राएं ! सबसे लंबी यात्रा – पदयात्रा– राहुल गांधी ने की। उन्होंने करीब आधा देश ही नाप लिया। इन सारी यात्राओं से देश में नई हलचल हुई, क्योंकि हर यात्रा कुछ कहती चली है। अब सारी यात्राएं पूरी हो रही हैं, फिर क्या होगा ? क्या सब फिर से चुप हो जाएंगे ? अपने घरों में बंद हो जाएंगे ? ऐसा हुआ तो सारी यात्राएं व्यर्थ हो जाएंगी।

इसलिए जरूरी है कि हमारे पांव चलें, मन चले और हमारी बातें चलें। हिंदोस्तां का आम नागरिक भी बोले। वह बोले और बाकी सब उसकी सुनें। महात्मा गांधी ने गुलाम भारत को बोलना सिखलाया था। भगत सिंह ने भी बहरों को सुनाने के लिए तेज आवाज उठाने की बात कही थी। इस यात्रा में कहीं मौलाना अबुल कलाम आजाद जुड़े तो कही बाबा खड़ग सिंह जुड़े। सब जुड़े तो भारत बोलने व चलने लगा। ऐसा ही आज भी करना होगा। इंसानियत, न्याय व भाईचारे को मजबूत करने वाली जबान में हम बोलेंगे तो देश का आम नागरिक भी बोलेगा। खामोशी आज जुर्म है।

(गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, नई दिल्ली में 04 फरवरी, 2023 को प्रस्तावित गोष्ठी का मुख्य विचार–बिन्दु।)

समाज, संघटन और क्रांति

आचार्य विनोबा

मैं एकांत में रहनेवाला मनुष्य हूं। लेकिन जेल में तो समाज ही में रहना हुआ, और उससे सोचने का काफी मसाला मिल गया। वहां सब तरह के लोगों से संपर्क हुआ। उनमें कांग्रेस वाले थे, समाजवादी थे, फॉरवर्ड ब्लॉकवाले और दूसरे भी थे। देखा कि ऐसा कोई खास पक्ष नहीं, जिसमें दूसरे पक्षों की तुलना में अधिक सज्जनता दिखायी देती हो। जो सज्जनता गांधीवालों में दिखायी देती है, वही दूसरों में भी दिखायी देती है, और जो दुर्जनता दूसरों में पायी जाती है, वह इनमें भी पायी जाती है। जब मैंने देखा कि सज्जनता किसी एक पक्ष की चीज नहीं, तब सोचने पर इस निर्णय पर पहुंचा कि किसी खास पक्ष या संस्था में रहकर मेरा काम नहीं चलेगा। सबसे अलग रहकर सज्जनता की ही सेवा मुझे करनी चाहिए। जेल से छूटने के बाद यह विचार मैंने गांधीजी के सामने रखा। उन्होंने अपनी भाषा में कहा – "तेरा अभिप्राय मैं समझ गया । तू सेवा करेगा, लेकिन अधिकार नहीं रखेगा। यह ठीक ही है।" इसके बाद जिन–जिन संस्थाओं में मैं था, उनसे इस्तीफा देकर अलग हो गया। वे सस्थाएं मुझे प्राण–समान थीं। उनके उद्देश्यों और कार्यक्रमों को अमल में लाने की कोशिश बरसों से मैं करता आया था। उनसे अलग होते समय दुःख जरूर हुआ, लेकिन आनंद का भी अनुभव किया। क्योंकि उन संस्थाओं की मदद तो मैं करनेवाला ही था। फिर भी अहिंसा के विकास के लिए मुक्त रहना जरूरी समझता था। हां, इसके साथ यदि मैं इस नतीजे पर आया होता कि 'कोई भी संस्था बनती है, तब उसमें थोड़ी हिंसा तो आ ही जाती है,' तो उतनी थोड़ी हिंसा की भी गुंजाइश मैं नहीं रखता, और आप लोगों से यही कहता कि 'किसी भी संस्था में आप न जायें।'

सज्जनों के संघटन से हिंसा का ह्रास

शस्त्रों के बारे में आज हम इस नतीजे पर आये हैं कि शस्त्र–धारण करने से हिंसा ही बढ़ती है। आज विज्ञान की प्रगति को देखते हुए शस्त्रों के उपयोग से जो अपार हानि होगी, उसकी तुलना में उनसे होनेवाला लाभ इतना मामूली ठहरेगा कि उसे हिसाब में गिना भी नहीं जायेगा। इसलिए जैसे अब हम लोग इस निर्णय पर पहुंच चुके कि शस्त्रों से हिंसा ही होती है, वैसे अभी तक मैं इस निर्णय पर नहीं पहुंचा कि अगर संस्था बनती है, तो उसमें कुछ–न–कुछ हिंसा आ ही जाती है।

अनुशासन का सवाल

हां, जब हम ऐसी संस्था बनाते हैं, जहां कुछ अनुशासन हो, और उसे न माननेवालों के खिलाफ कार्रवाई करनी पड़े, तो वहां हिंसा की संभावन रहती है। लेकिन वहां भी अगर किसी पर संस्था में शामिल होने का बंधन न होकर संस्था के नियम रखे गये हों, तो बात दूसरी हो जाती है। संस्था में शामिल न होने की हर एक को स्वतंत्रता है। शामिल होने पर भी कुछ नियमों का पालन हम न कर सकें, तो खुद होकर उससे हटने का भी मौका है। लेकिन जो आदमी अपनी इच्छा से ऐसी संस्था में दाखिल होता है, फिर नियमों का ठीक पालन नहीं करता और तिस पर भी संस्था के अंदर रहने का आग्रह रखता है, उसके विरुद्ध विवश होकर संस्था को अनुशासन की कार्रवाई करनी पड़ती है, तो उसका बचाव भी हो सकता है। फिर भी उसमें हिंसा का अंश दाखिल होना संभव है। लेकिन ऐसे अनुशासन की भी जहां गुंजाइश नहीं, वहां हिंसा का सवाल ही नहीं आता।

सर्वोदय–समाज ऐसी ही संस्था है। यहां अनुशासन नहीं है। इससे बहुत सारे खतरे मिट जाते हैं।

'संघ' नहीं 'समाज'

गांधीजी की मृत्यु के बाद सेवाग्राम में हुई सभा में हमने तय किया कि अपनी संस्था को किसी व्यक्ति का नाम देना ठीक नहीं होगा। इसलिए 'गांधी–संघ' जैसे नामों के बदले 'सर्वोदय–समाज' ही नाम रखा गया।

'संघ' न कहते हुए जो 'समाज' शब्द रखा है, वह साहित्यिक दृष्टि से नहीं, बल्कि इसके पीछे एक विचार है। 'संघ' शब्द में विशिष्ट अर्थ है। उसमें व्यापकता की कमी है। इसके विपरीत 'समाज' व्यापक है और 'सर्वोदय' शब्द के कारण उसकी व्यापकता परिपूर्ण हो जाती है। अगर 'संघ' नाम रखा जाता तो वह छोटी–सी संस्था बन

जाती। फिर उसमें कोई लिया जाता, तो कोई न भी लिया जाता। उसके नियम बनते, अनुशासन रखा जाता और उसे न माननेवालों के विरुद्ध अनुशासन–भंग की कर्रवाइयां होतीं। संघ तो एक ऐसी संस्था है, जिसमें विशिष्ट व्यक्तियों को ही अवसर मिलता है। उसमें वह व्यापकता और स्वतंत्रता नहीं होती जो मनुष्य के विकास के लिए जरूरी है।

मैं अपनी इस रचना में जितनी ताकत देखता हूं उतनी और किसी कुशल, स्पष्ट और अनुशासनबद्ध रचना में नहीं देखता। अनुशासनबद्ध दंडयुक्त रचना में शक्ति नहीं होती, यह बात नहीं। लेकिन वह शक्ति नहीं होती, जो शिवशक्ति है।

जब मैं इस दृष्टि से सोचता हूं, तो बुद्ध भगवान ने भिक्षु–संघ क्यों बनाये, और शंकराचार्य ने यति–संघ क्यों बनाये, इसका रहस्य खुल जाता है। फिर भी उन संघों के जो अनुभव आये हैं, उनके गुण–दोषों की तुलना कर मैंने अपने मन में यही निर्णय लिया है कि हम ऐसे संघ नहीं बनायेंगे; क्योंकि उनमें उनके गुणों से उनके दोष अधिक होते हैं, यह अनुभव आया है।

मैं मानता हूं कि जब लोग पांथिक बंधनों के कारण एक जगह आते हैं तो उनकी कल्याण करने की शक्ति नहीं बढ़ती। जब वे सहज बंधु–भावना से एकत्र होते हैं, स्थूल संबंधों को गौण मानते हैं, मत की अपेक्षा मनुष्य को अधिक महत्त्व देते हैं, बाह्य कर्म की अपेक्षा अंतरवृति को महत्त्व देते हैं, मनुष्य को मनुष्य के नाते पहचानते हैं, तब कल्याण करने की शक्ति बढ़ती है। मैंने ऐसी कई संस्थाएं देखी हैं, जिनका आरंभ तो अच्छे उद्देश्य से हुआ, लेकिन आगे उनके कार्यों से ही दोष उत्पन्न होने लगे। फिर उन दोषों का बचाव किया जाता है। वे छिपाकर भी रखे जाते हैं। फिर वृत्ति बदल जाती है, और टुकड़े होने लगते हैं। मुझे टुकड़े नहीं चाहिए, अखंड आनंद का अनुभव मुझे लेना है।

सत्य और संघटन

मेरा जितना विश्वास सत्य का जप करने में है, उतना संघटन में नहीं। यह नहीं कि संघटन की जरूरत ही नहीं पड़ेगी, परंतु मनुष्य शुभ विचार जपता और रटता चला जाये, तो उसके साथ जरूरी संघटन ऐसे ही पैदा हो जाता है। अगर मैं संघटन बनाता, तो मैं संकुचित बन जाता। किंतु मेरा संघटन नहीं है, इसीलिए मैं व्यापक हूं, दुनिया का अंश हूं। दुनिया में और अपने में मैं किसी तरह का भेद ही नहीं मानता। जो अपने अलग–अलग घर और अलग–अलग संस्था बनाकर बैठे हैं, उनसे मैं कहता हूं कि आपके घर में और संस्था में मेरी हवा का प्रवेश होने दो, तो आपका घर शुद्ध होगा।

सत्यनिष्ठा सर्वोदय की बुनियाद है। कुछ लोग कहते हैं कि इससे सर्वोदय–समाज में अधिक लोग नहीं आयेंगे। मैं कहता हूं कि ऐसा कहनेवाला भगवान की जगह लेना चाहता है। पर मैं नहीं ले सकता। आखिर सभी मनुष्यों में शुभ प्रेरणाा क्यों पैदा नहीं होगी ? होगी, ऐसी ही मैं आशा रखूंगा। लेकिन मान लीजिए कि ऐसी प्रेरणा किसी को भी न हुई, और सर्वोदय–समाज हवा में ही रह गया, तब भी यह अव्यक्त कल्पना विश्वकल्याण करेगी। इसके विपरीत, सत्यनिष्ठा–विहीन बहुत बड़ी संख्या किसी समाज में शामिल हुई तो भी विश्वकल्याण की दृष्टि से उसका तनिक भी उपयोग नहीं होगा।

'संघ–शक्ति कलौ युगे'

सर्वोदय–विचार की यही खूबी है कि इसमें स्वतंत्र और विभिन्न विचारों को पूरा–पूरा अवसर है। वह विशिष्ट व्यवस्था या विशिष्ट बाह्य आकार का आग्रह नहीं रखता। वह संघटन को ही शक्ति मान नहीं बैठता, पर सत्य की शक्ति पहचानता है। वह इस भ्रम में नहीं पड़ता कि अशक्ति संघटित होते ही शक्ति बन जाती है। आलसी लोगों ने शक्तिशाली बनने का यह सरल तरीका खोज निकाला है। यदि रोगों का संग्रह करने से ही स्वास्थ्य बनता, तो न वैद्यों की जरूरत पड़ती, न औषधों की, और न पौष्टिक अन्न की ही ! पर हिंसा में यह सब खप जाता है। दस लाख की फौज खड़ी करते ही राष्ट्र बलवान बन जाता है। कहा जाता है कि सिपाही जीत गये तो राष्ट्र भी जीत गया ! पर यह नहीं कहा जा सकता कि सिपाही को भोजन मिलते ही राष्ट्र को भी भोजन मिल गया ! कहते हैं – **'संघ–शक्ति कलौ युगे'** – यानी कलियुग में संघ में ही शक्ति का निवास है। पर यह नहीं पहचानते कि अब कलियुग बचा ही नहीं है। अब तो कृतयुग, कृतियुग, सत्कृति–युग आ गया है। कलियुग तो कब का खतम हो गया ! जब मैं जाग उठा, तो फिर कलियुग कहां रहा ?

छोटे संघटन चलेंगे

सर्वोदय संघटन के पीछे नहीं पड़ता, इसमें भी उसकी अपनी एक दृष्टि है। सर्वोदय का सेवक आवश्यक प्रतीत होने पर स्थानिक संघटन भी कर सकता है। वह संघटन विचारनिष्ठ ही होगा। उसमें प्रत्येक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से पूर्ण परिचय रहेगा। दंभ के लिए अवसर ही नहीं रहेगा। उसमें अभिमान घुस ही न पायेगा। जब छोटे पैमाने पर कोई चीज बनती है, तो उस समय इन दोषों से बचना सुकर हुआ करता है। किंतु दंभ और अभिमान इतने सूक्ष्म दोष हैं कि चाहे जहां प्रवेश कर सकते हैं। यदि सेवक को दिखायी पड़े कि उसके छोटे–से संघटन में भी ये दोष घुसने लगे हैं, तो वह उस संघटन को तोड़ भी डालेगा। वैसे तो वह ऐसा प्रसंग आने ही न देगा। किन्तु जो भी कुछ वह करेगा, उसका सारा उत्तरदायित्व उसी पर रहेगा।

आजकल जो उठता है, वह अपना अखिल भारतीय संघटन करना चाहता है। फिर विभिन्न प्रांतों में उसकी दस–पांच प्रांतीय शाखाएं खोल दी जाती हैं। फिर दस की सौ जिला शाखाएं हो जाती हैं। लेकिन पत्थर के कितने भी टुकड़े किये जायें, तो भी उसमें से आटा थोड़े ही मिलेगा ? जहां शाखा खोलने का संघटन चलता है, वहां सेवा का नाम तक नहीं रहता। यह पद्धति ही गलत है।

खुद से आरंभ

अगर सर्वोदय–समाज की स्थापना करनी हो, तो खुद से ही आरंभ करना चाहिए। हममें अगर द्वेष या मत्सर हो, तो उसे दूर करना चाहिए। जिसके प्रति द्वेष–मत्सर हो, उसके पास जाकर उससे दोस्ती कर लेनी चाहिए। इस तरह सर्वोदय–समाज का काम व्यक्तिगत तौर पर शुरू हो जाता है। फिर धीरे–धीरे दो–चार मित्र तैयार हो जाते हैं और आगे समूचा गांव तैयार हो जाता है। ऐसे दो–चार गांव मिल जायें, तो काम बढ़ा सकते हैं। धीरे–धीरे सारा विश्व और सारा ब्रह्मांड भी संघटित हो सकता है। तभी वह संघटन मूल से, अंतःप्रेरणा से और स्वाभाविक रूप से हुआ समझा जायेगा।

यदि हम केवल विचार देने के बजाय संघटन करने बैठें, तो हमारे संघटन में शरीक होने वाले ही हमारे रहेंगे। पर मुझे ऐसा नहीं चाहिए। जो खद्दर पहनता है और नहीं भी पहनता, जो शराब पीता और नहीं भी पीता, वे सभी मेरे हैं और मैं उनका हूं। उनके साथ एकरूप होना चाहता हूं। संघटन से यह संभव नहीं।

इसका यह अर्थ नहीं कि संस्था बनानी ही नहीं चाहिए। जरूरत पड़ने पर सर्वोदय–समाज के लोग छोटी–सी संस्था बना सकते हैं। लेकिन ऐसी संस्था संघटन नहीं, बल्कि एक व्यवस्था भर होगी, जैसे किसी परिवार में होती है। वैसी संस्था में चार–छः कार्यकर्त्ता साथ रहकर काम कर सकते हैं। आपस में मिलकर काम करने के लिए किसी एक सूत्र की आवश्यकता पड़ती है, और वह सूत्र है, **सत्य और अहिंसा।**

(विनोबा साहित्य : खण्ड–16, पृष्ठ 383–389 से साभार!)

स्वराज की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

नन्दकिशोर आचार्य

'स्वराज' अथवा 'स्वराज्य' पद का प्राचीनतम उल्लेख हमें वैदिक साहित्य में प्राप्त होता है। ऋग्वेद के ऐतरेय ब्राह्मण में पश्चिमी भारत में 'स्वराज' व्यवस्था के होने की बात कही गयी है तथा उसके प्रधान को 'स्वराट्' कहा गया है। उसके महत्त्व को दर्शाते हुए बताया गया है कि वह अपने समान स्थिति के लोगों द्वारा 'ज्येष्ठ' के रूप में चुना जाता है। इसका तात्पर्य यह लगाया गया है कि 'स्वराज्य' स्वशासित समाज की व्यवस्था थी क्योंकि 'स्वराट्' शब्द का अर्थ 'स्वशासित' अथवा आत्मशासित है और उस समाज के सभी सदस्य, समान होने के कारण, स्वशासित हैं। महाभारत में उन्हें 'सद्रशास्' कहा गया है। यजुर्वेद में भी 'स्वराज्य' व्यवस्था के प्रचलन का उल्लेख प्राप्त होता है। इन सब उल्लेखों से स्पष्ट हो जाता है कि 'स्वराज्य' केवल एक आदर्श के रूप में नहीं, बल्कि व्यवहारतः प्रचलित एक राजनैतिक व्यवस्था थी, जिसमें समाज के सभी सदस्यों को समान हैसियत प्राप्त थी और उनमें से किसी एक को कार्य–संचालन के लिए ज्येष्ठ के रूप में स्वीकार किया जाता था, जिसे कुछ मर्यादाओं के अनुसार कार्य करना होता था।

ऐतरेय ब्राह्मण में 'वैराज्य' नामक एक शासन–प्रणाली का भी उल्लेख मिलता है, जो संभवतः, उत्तरी भारत ही नहीं, दक्षिणी भारत में भी प्रचलन में थी। विद्वानों द्वारा 'वैराज्य' का अर्थ भी 'राजाविहीन' लगाया गया है। जैन ग्रंथ 'आचारांग सूत्र' में 'स्वराज्य' तथा 'वैराज्य' दोनों प्रकार की व्यवस्थाओं का उल्लेख करते हुए जैन साधुओं–साध्वियों को ऐसे प्रदेशों से हो कर यात्रा करने के लिए मना किया गया है, क्योंकि इन व्यवस्थाओं में अपरिचित साधुओं पर गुप्तचर होने का सन्देह किये जाने की प्रवृत्ति मिलती है। इस बात की पुष्टि कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' से भी होती है। कौटिल्य इन व्यवस्थाओं को दायित्वहीन मानते हुए उनका विरोध करते हैं। 'स्वराज्य' और 'वैराज्य' दोनों प्रकारों का भेद अधिक स्पष्ट नहीं होता, पर दोनों में ही किसी–न–किसी प्रकार के 'स्वशासन' की स्वीकृति है और यह केवल राजनैतिक स्वतंत्रता के अर्थ में नहीं, बल्कि समाज के प्रत्येक सदस्य के 'स्वशासन' के अर्थ में है, जिसका स्पष्ट तात्पर्य कुछ मर्यादाओं को स्वीकार करते हुए 'आत्म–निग्रह' है।

जाहिर है कि यह व्यवस्था बड़े साम्राज्यों की नहीं, बल्कि स्वतन्त्र स्थानीय संप्रदायों की ही कोई व्यवस्था हो सकती थी, जिसके प्रमाण हमें गुप्त काल तक मिल जाते हैं। जायसवाल का मत समीचीन लगता है कि 'व्यक्ति–शासकविहीन' राज्य का यह सिद्धान्त अत्यन्त छोटे प्रदेशों में व्यवहारतः सम्भव हुआ होगा। निश्चय ही कुछ हिन्दू तोलस्तोय और मैजिनी रहे होंगे, जिन्होंने ऐसे महिमान्वित और लगभग असम्भव संविधानों को बनाया और कार्यान्वित भी किया।

आधुनिक भारतीय राजनैतिक सन्दर्भ में 'स्वराज' पद का प्रथम प्रयोग 1876 ई. में स्वामी दयानन्द सरस्वी द्वारा किया गया था, जिससे उनका आशय भारत की राजनैतिक स्वतन्त्रता से था। बाल गंगाधर तिलक ने भी इसी अर्थ में इस पद का प्रयोग करते हुए 1905 में 'स्वराज' को जन्मसिद्ध अधिकार बताया था। 1906 में पहली बार दादाभाई नौरोजी ने 'स्वराज' को कांग्रेस आन्दोलन का लक्ष्य कहा। 1905 के वक्तव्य में दादाभाई नौरोजी का आग्रह 'ब्रिटिश प्रभुत्व के अन्तर्गत स्वराज' के लिए था। लेकिन, 1906 में कांग्रेस अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए उन्होंने स्वराज की अपनी अवधारणा की व्याख्या करते हुए कहा कि स्वराज हमारा आदर्श है। किस तरह का स्वराज ? 'वैसा स्वशासन जो यू. के. अथवा उपनिवेशों में है।' लेकिन, 'स्वराज' के इस आदर्श की व्याख्या में कांग्रेस के उदारवादी तथा चरमपंथी पक्षों में बुनियादी मतभेद था, जिसका परिणाम 1907 में कांग्रेस के विभाजन में हुआ, जो अन्ततः 1916 में पुनः एकीकृत हुई। उदारवादी नेता गोपालकृष्ण गोखले का मत था कि यह स्वराज ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत रहते हुए ही व्यवहारतः साध्य हो सकता है। लेकिन, चरमपंथी पक्ष, जिसका नेतृत्व बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपतराय तथा बिपिनचन्द्र पाल (बाल, पाल, लाल) एवं श्री अरविन्द जैसे नेता कर रहे थे, का मानना था कि हमें ब्रिटिश नियन्त्रण से मुक्त पूर्ण स्वायत्तता चाहिए, जो ब्रिटिश प्रभुत्व के अन्तर्गत 'स्वराज' से नहीं मिल सकती।

बिपिनचन्द्र पाल ने महात्मा गांधी के 'हिन्द स्वराज' (1909) के प्रकाशन से भी पूर्व 1907 में 'स्वदेशी और स्वराज्य' शीर्षक से मद्रास (चेन्नई) में पांच व्याख्यान दिये थे जो उसी वर्ष पुस्तक रूप में भी प्रकाशित हो गये थे। श्री पाल ने इन व्याख्यानों में 'स्वराज' की जो व्याख्या तथा उसके लिए जिन उपायों को अपनाने का निर्देश किया था, अनन्तर महात्मा गांधी के कार्यक्रमों पर भी उनका प्रभाव देखा जा सकता है – यद्यपि स्वराज के बारे में उनकी अपनी व्याख्या में श्री पाल की व्याख्या से पर्याप्त भिन्नता है। यह उल्लेखनीय है कि अनन्तर स्वयं कांग्रेस ने भी लाहौर अधिवेशन में ब्रिटिश साम्राज्य से मुक्त 'स्वराज' अर्थात् पूर्ण स्वतन्त्रता को अपना लक्ष्य घोषित कर दिया था।

यह उल्लेखनीय है कि 'स्वराज्य' की अवधारणा के साथ जुड़ी 'स्वदेशी' की अवधारणा की भी श्री पाल के व्याख्यानों में विस्तृत चर्चा की गयी है। दरअसल, 'स्वदेशी' का आन्दोलन बंग–भंग के विरोध में किये गये आन्दोलन का मुख्य हिस्सा था, जिसके साथ राष्ट्रीय शिक्षा के लिए भी आग्रह किया गया था और उसके कुछ प्रयोग भी तत्कालीन बंगाल में किये गये थे। विदेशी माल का बहिष्कार अथवा बायकॉट का प्रयोग भी इसी आन्दोलन के अन्तर्गत पहली बार किया गया था। चरमपंथियों का भी आग्रह तो यही था कि उनके कार्यक्रम शान्तिपूर्ण तथा विधिसम्मत होंगे,

जिसका सर्वोत्कृष्ट उदाहरण बारिसाल के बहिष्कार आन्दोलन में मिलता है, जो 'निष्क्रिय प्रतिरोध' का अत्यन्त प्रभावशाली रूप था, और उसे शान्तिपूर्ण उपायों के सन्दर्भ में महात्मा गांधी के नेतृत्व में हुए 'सविनय अवज्ञा' या नमक आन्दोलन के साथ रखा जा सकता है। यह भी उल्लेखनीय है कि स्वदेशी की व्याख्या करते हुए श्री पाल ने भी अपने व्याख्यान में पश्चिमी उद्योगवाद की आलोचना के साथ प्रस्तावित किया : "हमारा औद्योगिक आदर्श यूरोप और अमेरिका द्वारा अपनायी गयी पद्धति नहीं होना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक पश्चिमी देश में इस उद्योगवाद ने पूंजी और श्रम तथा आर्थिक और नैतिकता की समस्याओं को पैदा किया है, जिनके सम्मुख सर्वाधिक बुद्धिमान् राजनीतिज्ञ, राष्ट्र के महानतम विचारक भी हताश बैठे हैं। क्या आप इस देश में भी वे ही समस्याएं पैदा करना चाहते हैं ? अन्य क्षेत्रों की तरह, इस मामले में भी हमारे औद्योगिक विकास को हमारी अपनी जातीय प्रतिभा का मार्गदर्शन स्वीकार करना, अतीत में अपने ऐतिहासिक विकास द्वारा संकेतित मार्ग को अपनाना, अपने पूर्व अनुभवों से प्रेरणा और सामर्थ्य पाना होगा, और सर्वोपरि इस महान् तथ्य को सदैव ध्यान में रखना होगा कि जैसे मुनष्य केवल रोटी पर नहीं जीता वैसे ही केवल विक्रय–योग्य वस्तुओं के उत्पादन पर ही राष्ट्र का जीवन और समृद्धि निर्भर नहीं करते।"

श्री पाल 'निष्क्रिय प्रतिरोध' का आग्रह करते हैं तथा उसकी व्याख्या करते हुए कहते हैं : "निष्क्रिय प्रतिरोध अक्रिय नहीं, किन्तु अनाक्रमक प्रतिरोध है। हम अपने अधिकारों पर अड़े हैं। हम उस कानून की सीमाओं के भीतर अड़े हैं, जो अभी हमारे देश में प्रचलित है। हम उस कानून का तब तक सम्मान करेंगे, जब तक वह कानून हमारे उन प्राथमिक अधिकारों का सम्मान करते हैं, जो किसी भी सरकार की सत्ता के घटक हैं, चाहे वह सरकार निरंकुश हो अथवा संवैधानिक; लेकिन, वे अधिकार किसी सरकार द्वारा प्रदत्त नहीं हैं, इसलिए उन्हें कोई भी सरकार नष्ट नहीं कर सकती। जब तक इस सरकार के कानून हमारे प्राथमिक अधिकारों, जीवन, वैयक्तिकता, सम्पत्ति और अन्य समान प्राथमिक अधिकारों का सम्मान करते हैं, तब तक हम कानून की सीमाओं के भीतर रहने का वादा करते हैं। " महात्मा गांधी भी कानूनों का सम्मान करने की बात तो करते हैं, लेकिन यदि कानून स्वयं ही अन्यायपूर्ण हो तो वह उसके प्रतिरोध में सत्याग्रह करना अपना कर्तव्य समझते हैं :"मैंने पाया है कि कानून का स्वैच्छिक आज्ञापालन हमारा प्रथम कर्त्तव्य है, लेकिन इस कर्तव्य को निभाते हुए मैंने समझा है कि जब कानून असत्य का पोषण करने लगे तो उसकी आज्ञा का उल्लंघन भी मेरा कर्तव्य हो जाता है।" थोरो भी तो पूछते हैं : सत्य प्राथमिक है या कानून ?

लेकिन, अपने इस कर्तव्य–पालन में जहां महात्मा गांधी किसी भी स्थिति में अहिंसा को नहीं छोड़ना चाहते, वही श्री पाल मजबूर किये जाने पर हिंसा का पूर्ण अस्वीकार नहीं करते। बारिसाल की घटना के बाद वह स्पष्ट कर देते हैं कि यदि सरकार गैरकानूनी हिंसा करती है, तो उसका हिंसक विरोध हो सकता है : "बारिसाल घटना के बाद हमने अपने संकल्प की ताकत भी दिखा दी। हमने खुली घोषणा कर दी कि हम भविष्य में ऐसा अत्याचार बर्दाश्त नहीं करेंगे। मैमनसिंह में एक सार्वजनिक सभा के दिन वहां के बार के नेता ने पुलिस इंस्पेक्टर को चेतावनी दी : "हम आज एक सार्वजनिक सभा करने जा रहे हैं। यदि आप एक सम्मानित नागरिक की तरह आना चाहें, तो आपका स्वागत है। यदि आप हम में से किसी को भी गिरफ्तार करने के वारंट के साथ आते हैं, तो आपका बिना वारंट के भी कोई प्रतिरोध नहीं किया जायेगा। यदि आप शान्तिपूर्वक और कानूनन हमें गिरफ्तार करते हैं, तो भी आपके कर्तव्य–निर्वाह में कोई बाधा नहीं दी जायेगी। लेकिन, यदि आप अपनी नियामक लाठियों के साथ हमारा सर तोड़ने के लिए आते हैं, तो दोनों पक्षों के सर टूटेंगे।"

लेकिन महात्मा गांधी के लिए 'स्वराज' का तात्पर्य केवल राजनैतिक स्वतन्त्रता नहीं है – यद्यपि कई बार वह इस अर्थ में भी 'स्वराज' शब्द का प्रयोग करते हैं। ऐसा इसलिए है कि यह शब्द गांधीजी के भारतीय राजनीति में प्रवेश से पूर्व ही जनता में लोकप्रिय हो चला था और उनके लिए इसका तात्पर्य राजनैतिक स्वतन्त्रता और भारत में संसदीय लोकतन्त्र की स्थापना था। महात्मा गांधी के नेतृत्व में लड़े जा रहे अहिंसक आन्दोलनों का तात्कालिक लक्ष्य भी वही था। लेकिन, महात्मा गांधी की 'स्वराज' की अवधारणा राजनैतिक स्वतन्त्रता से ऊपर उठ कर व्यक्ति

विकास नाम का आधुनिक भस्मासुर

चिन्मय मिश्र

जोशीमठ के घरों, मंदिरों, बाजारों में पिछले चार बरसों से बढ़ती दरारों की ओर हमारा ध्यान तब तक नहीं गया, जब तक कि वे इतनी चौड़ी नहीं हो गईं, जिसमें हम सशरीर आड़े समा सकते थे। अभी भी ध्यान भर गया है, हम चेते नहीं हैं। जोशीमठ को एक ओर से पहाड़ों के बीच से गुजरती सुरंग प्रलय की ओर ले जा रही है और दूसरी ओर नीचे बन रही "सिक्स लेन" सड़क उसका आधार, उसकी नीव को खोखला कर रही है। जो पत्थर ठोस हैं, गहरे हैं, वे डायनामाइट से उड़ाए जा रहे हैं और जो ढीले व कमजोर हैं वे हथौड़े से तोड़े जा रहे हैं; यानी विनाश का दौर अपने चरम पर है।

सार्थवाह हिमालय के लेखक अजय सोडानी ने वर्षों पहले बता दिया था, "इन दिनों हिमालय को मनमाफिक बरतने की मंशा चरम पर है। उसे वैसे तैयार किया जा रहा है जैसे करते हैं तैयार घोड़े–हाथी को आरोहण हेतु। जैसे बनाया जाता है बच्चों को जबरन भिखारी, गायक, धावक, बाहुक (जैसे कुली, मजदूर, आज्ञाकारी, गुलाम, नौकर, मुलाजिम) या नौजवानों का मानस ढाला जाता है, बाजार चलाने, सरकार बचाने अथवा आतंक फैलाने हेतु। ठीक वैसे ही हिमाला को बिकने योग्य दिखने के लिए स्मार्ट बनाया जा रहा है। कुरेदे जा रहे हैं उसके कोने। तोड़ा–मरोड़ा जा रहा है वहां की नदियों को। उनकी सघन जटाओं को छांट कुछ इस तरह से संवारा जा रहा है कि वह अन्तर्राष्ट्रीय फुटबाल खिलाड़ी–सा दिखने लगे। बदन टैटूमय। खुपड़िया अलग–अलग सफाचट, बीच में तरतीब से उलझाए, मनचाहे रंगत के केश। कल्पनातीत है हिमाधिराज की कल सामने आने वाली जर्क–बर्क छबि।"

जोशीमठ तो आगाज है, विनाशलीला का। वैज्ञानिक एवं भूगर्भीय तथ्यों की पड़ताल होना एक अनिवार्यता है, लेकिन जब हम साक्षात परिणाम देख रहे हों, तो कैसा परीक्षण ? हिमालय नई शब्दावली में कहें तो वेंटिलेटर पर है। अभी संभलना ही किसी अन्य परिणाम पर ले जा सकता है। याद रखिए पोस्टमार्टम से किसी व्यक्ति की मृत्यु का कारण अवश्य बताया जा सकता है, लेकिन वजह जान लेने के बावजूद विज्ञान उसे पुनः जिन्दा नहीं कर सकता। हां, इतना अवश्य है कि दूसरे लोग इससे लाभान्वित हो सकते हैं। परंतु हिमालय व मनुष्य में फर्क है। दूसरा, हिमालय अब विकसित नहीं हो सकता। अतएव पोस्टमार्टम का कोई लाभ नहीं निकलेगा। इसे तो हर हाल में बचाना ही होगा। कोई और विकल्प ही नहीं है हमारे पास। साथ ही यह भी समझ लेना चाहिए कि हिमालय का विनाश भारत के चालीस प्रतिशत क्षेत्रफल के विनाश का कारण बनेगा। हिमालय के विनाश से गंगा सागर तक, दिल्ली सहित, पूरा देश बिना पानी का हो सकता है। पर जिद का तो कोई इलाज ही नहीं है।

➪और समाज के जीवन के सभी पहलुओं को अपने वृत्त में लेने वाली आदर्श अवधारण थी। दोनों अवधारणाओं अथवा लक्ष्यों के इस भेद को स्पष्ट करते हुए महात्मा गांधी 'हिन्द स्वराज' के 1921 में प्रकाशित संस्करण की नयी भूमिका में लिखते हैं : "लेकिन, मैं पाठकों को एक चेतावनी देना चाहता हूं। वे ऐसा न मान लें कि इस किताब में मैंने जिस स्वराज्य की तस्वीर खड़ी की है, वैसा स्वराज्य कायम करने के लिए आज मेरी कोशिशें चल रही हैं। मैं जानता हूं कि अभी हिन्दुस्तान उसके लिए तैयार नहीं है। ऐसा कहने में शायद ढिठाई का भास हो, लेकिन मुझे तो पक्का विश्वास है कि इसमें जिस स्वराज्य की तसवीर मैंने खींची है, वैसा स्वराज्य पाने की मेरी निजी कोशिश जरूर चल रही है। लेकिन, इसमें कोई शक नहीं कि आज मेरी सामूहिक प्रवृत्ति का ध्येय तो हिन्दुस्तान की प्रजा की इच्छा के मुताबिक पार्लियामेंटरी ढंग का स्वराज्य पाना है।" इसलिए, महात्मा गांधी की 'स्वराज' की अवधारणा के विवेचन के लिए अलग से विचार करना बेहतर होगा और यह भी कि 'स्वराज' की इस अवधारणा के तत्वमीमांसीय आधार और आयाम क्या हो सकते हैं।

(स्वराज आधार और आयाम : पृष्ठ 9–13)

हिमालय में रहने वाले अनादि काल से यह जानते रहे हैं कि यहां कुछ भी स्थायी नहीं है। **सार्थवाह हिमालय** में लिखा है, "पूछने वाले इस देवी–कथा और जोशीमठ में नवदुर्गा पर घी चढ़ाने की परंपरा का नाता पूछेंगे। तो जान लें, जोशीमठ कभी इतना गर्म नहीं होता कि घी पिछल जाए। जो पिघला, तो मायने यह कि मौसम अतिशय गर्म है। जिस जगह ने कभी तीक्ष्ण ग्रीष्म ही नहीं देखा, वहां गर्मी से कहर बरपा कि बरपा! प्रतीत होता है हमारे पूर्वज उत्तराखंड हिमालय की तासीर से भली–भांति परिचित थे। उन्हें इल्म था कि वह अधिक दिनों तक एक पासे नहीं बैठने का, कि यहां भूचाल आते ही रहेंगे। (बांध, नदी बांधने, जलविद्युत बनाने हेतु उदयम स्थापित करने के बाद सन् 1983 से 1992 ई. तक गढ़वाल ने ग्यारह तगड़े भूंकप झेले हैं। छोटों की गिनती नहीं।) इससे जानमाल की हानि के साथ जोशीमठ, बदरीनाथ, गोपेश्वर के देवालयों को नुकसान पहुंचा है। गोपेश्वर इलाके में धरती में पड़ी दरार पूर्व–पश्चिम की ओर बढ़ रही है।

हिमालय जैसा का वैसा नहीं रहने का। एहतियातन उन्होंने तमाम तैयारियां कर लीं। "भविष्य बदरी की जगह नियत कर दी, भविष्य केदार की भी। मुझे तो यह अब अज्ञान नहीं लगते, अनुभव जन्य विज्ञान लगते हैं।" गौर करिए "भविष्य बदरी" व "भविष्य केदार" की परिकल्पना पर ! तो जानिए भविष्य बदरी कहां स्वयंभू विकसित हो रहा है ? जोशीमठ से बद्री विशाल की ओर जाएं तो दो रास्ते कटते हैं। एक नीचे बद्री विशाल की ओर जाता है और दूसरा ऊपर नीति वैली (घाटी) की ओर। इस मार्ग पर 20 किलोमीटर आगे रेणी गांव है। यहीं पर घोलीगंगा मिलती है जो तपोवन से आती है। इसी के गाड (नाले) पर उस जलविद्युत परियोजना का निर्माण हो रहा था जो पिछले वर्ष ध्वस्त हो गई। स्थानीय लोगों का कहना है कि सर्वोच्च न्यायालय की रोक के बावजूद यहां काम चलता रहा था और सन् 2016 के बाद तो देश में बड़े लोगों पर कोई कानून वैसे भी कहां लागू होता है ? यहीं पर वह सुरंग बन रही थी, जिसमें न मालूम कितने मजदूर बाहर नहीं आ सके। इसी नाले में नंदादेवी की ओर से पानी आता है जिसे कथित तौर पर रेडियोधर्मी भी कहा जाता है। इस गाड की दूसरी तरफ लाता गांव है।

इसी गांव से सटे पहाड़ के शीर्ष पर कहीं भविष्य बदरी स्थित हैं। हमारे पूर्वजों ने अपने देवता का नया निवास भी तैयार कर दिया था। परंतु बीच में "विकास" आ गया। पुरखे यह तो जानते थे कि हिमालय का यह हिस्सा स्थायी नहीं है। ग्लेशियर के पीछे हो जाने से बाहर आया यह भूस्खलन कैसे स्थायी हो सकता है ? उन्होंने इसी को ध्यान में रखकर अपने घर भी बनाए। लोगों का कहना है कि वहां कुछ पांच मंजिले मकान पिछले 400 बरसों से भी ज्यादा समय से अक्षुण्य खड़े हैं। लोग उनमें रह रहे हैं। उन्होंने तीव्र से तीव्र भूकंप भी झेल लिए। परंतु वे भविष्य के आधुनिक विकास नामक दानव के इतने शक्तिशाली होने की कल्पना नहीं कर पाए थे। वैसे वे भस्मासुर की कल्पना तो पहले कर ही चुके थे। यह आधुनिक विकास भी कमोवेश भस्मासुर, खासकर हिमालय के संदर्भ में, सिद्ध हो रहा है।

प्रशासन ने अभी औली में स्थित देश के सबसे लंबे रोप वे के संचालन पर भी रोक लगाई है। औली को लेकर **सार्थवाह हिमालय** में कटु टिप्पणी है, "प्रकृति के प्रति हमारी बर्बर मानसिकता का जिन्दा नमूना है औली। कैसे ? वो ऐसे कि 'बारहमास रोजगार' के नाम पर यहां शीतकालीन खेलों को विकसित करने की योजना बनी। इसके लिए पहाड़ के ढलान पर से जंगल छांटे गए। मैदान तो हासिल हो गए पर बर्फ खत्म हो गई। अब➪

'संस्थाकुल' हिन्दी मासिक

फार्म–4 (रूल 8)

प्रकाशन का स्थान	:	राजघाट, नई दिल्ली–110002
प्रकाशन की अवधि	:	मासिक
मुद्रक का नाम	:	संजय सिंह
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	गांधी स्मारक निधि, राजघाट, नई दिल्ली–110002
सम्पादक का नाम	:	रामचन्द्र राही
पता	:	गांधी स्मारक निधि, राजघाट, नई दिल्ली–110002
स्वामित्व	:	गांधी स्मारक निधि, राजघाट, नई दिल्ली–110002

मैं संजय सिंह यह घोषणा करता हूं कि मेरे द्वारा ऊपर दिये गए तथ्य मेरी जानकारी के अनुसार सत्य हैं।

हस्ताक्षर
संजय सिंह
प्रकाशक

श्रद्धांजलि

इंद्रजीत भाईजी नहीं रहे

इंद्रजीतजी (भाईजी), 2 जनवरी, 2023 को ईश्वर के चरणों में पहुंच गये। वह अत्यत सेवाभावी, प्रेमल, सात्विक, अध्यात्मिक पुरुष थे। गांधी हिंदुस्तानी साहित्य सभा से वे 50–60 वर्षों से जुड़े थे। काकासाहेब की विश्व समन्वय की विचारधारा को इंदुभाई ने अपनाया था। पूरे विश्व में यह विचार फैले यह काकासाहेब के विचार थे। काकासाहेब ने 1967 में विश्व समन्वय संघ की स्थापना की, तब इंदुभाई ने जरनल सेक्रेटरी की जिम्मेदारी ली थी। अंतिम वर्षों में उनकी उत्कट इच्छा थी कि यह विचार ज्यादा फैले, उसके लिए अनेक लोग जुड़ें।

सोनेस्वर कोंवर का अवसान

असम गांधी स्मारक निधि के अध्यक्ष **सोनेस्वर कोंवर** का लम्बी बीमारी के बाद **5 जनवरी, 2023** को देहावसान हो गया।

➪स्नोस्कीटिंग कैसे हो ? बर्फ नहीं तो खेल भी नहीं। इसलिए यहां पर बर्फ के उत्पादन के लिए एक संयंत्र स्थापित हुआ। यानी हिमालय में कृत्रिम बर्फ। परंतु मुद्दा यह भी था कि पानी कहां से लाएं। तो वहां एक तालाब बनाया गया, पच्चीस हजार घनमीटर क्षमता वाला। अब आप खुद ही सोचिए एक कमजोर पहाड़ पर बरसात का पानी इकट्ठा कर यदि इतना बड़ा तालाब बनेगा तो उसके वजन से और जमीन में पानी के रिसाव से किस तरह की परिस्थिति या पारिस्थितिकी का निर्माण होगा। मगर जीवित "रोबोट" तो सोचते नहीं। जो आदेशित होता है उसका पालन करते हैं। तो रोबोट ही विकास नामक भस्मासुर को आदेशित कर रहे हैं।

अंत में महात्मा गांधी की इस बात पर गौर करिए : " Your liberty of swing your hand ends where tip of my nose begings" यानी हाथ हिलाने के अधिकार में दूसरों को घूंसा मारने का अधिकार निहित नहीं है। उम्मीद है विश्व के राजनेता और नियोजनकर्ता अपनी सीमा पहचान पाएंगे।

(www.humsamovet.com)

डॉ. सुचेत गोइंदी का देहावसान

उत्तर प्रदेश महिला कॉलेज की प्रथम महिला प्राचार्या डॉ. सुचेत गोइंदी हमारे बीच नहीं रहीं। दिनांक 16.01.2023 को उनका चंडीगढ़ में देहांत हो गया। वह इलाहाबाद में एक समाज सेविका के रूप में हमेशा अग्रणी भूमिका में रहीं। समाज में हो रहे सांस्कृतिक मूल्यों के पतन पर वह हमेशा मंच से बोलती रहीं और लोगों को प्रेरित भी करती रहीं। सितंबर 1947 में इलाहाबाद स्टेशन पर स्वतंत्रता सेनानी, गांधी विचारनिष्ठ स्व. भगवान दास गोइंदी की तीनों बेटियों के सिर पर हाथ रख महात्मा गांधी ने ऐसा जादू किया कि सुचेत गोइंदीजी एवं उनकी दोनों बहनें आजीवन सत्याग्रही बनी रहीं। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सक्रिय भूमिका उन्होंने निभायीं। जिसके लिए इलाहाबाद विश्वविद्यालय ने उन्हें पुरस्कृत किया था। सामाजिक कार्यों व शिक्षा के क्षेत्र में योगदान के लिए उन्हें कई अन्य पुरस्कारों से भी अलंकृत किया गया था।

वीरेन्द्र विद्रोही का देहान्त

राजस्थान के सक्रिय सामाजिककर्मी **वीरेन्द्र विद्रोही** का करीब 61 वर्ष की आयु में **दिनांक 21.01.2023** को देहान्त हो गया। स्व. वीरेन्द्र विद्रोही सम्पूर्ण क्रान्ति आन्दोलन से छात्र–जीवन में ही जुड़ गये थे। वे अलवर जिले की छात्र–युवा संघर्षवाहिनी के संयोजक रहे। राजस्थान समग्र सेवा संघ के सहमंत्री एवं जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष की जिम्मेदारी भी संभाली। मानवाधिकार एवं सामाजिक क्षेत्र में काम करनेवाली संस्था **इंसाफ** के वे संस्थापक थे। उनके समर्पित सामाजिक जीवन का सम्मान करते हुए, उनके परिवार की सहमति से, सामाजिक कार्यकर्त्ता और उनके अभिन्न साथी श्री सवाई सिंह ने, राजस्थान के सामाजिक कार्यकर्त्ताओं की ओर से, उनको मुखाग्नि दी।

दिवंगतों को हमारी विनम्र श्रद्धांजलि एवं उनके परिवारजनों के प्रति हार्दिक शोक संवेदना। – सं.

मंत्री की कलम से

गांधी स्मारक निधि दक्षिण क्षेत्रीय राज्य सम्मेलन (21–22 जनवरी, 2023) :

गांधी भवन, बेंगलुरू में दो दिवसीय दक्षिण क्षेत्रीय राज्य सम्मेलन (21–22 जनवरी, 2023) आयोजित किया गया। सम्मेलन में तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल, तेलंगाना, आन्ध्र प्रदेश राज्यों के गांधी स्मारक निधि के पदाधिकारियों, कार्यकर्त्ताओं के साथ ही गांधी–विचार की अन्य संस्थाओं के प्रतिनिधि भी उपस्थित रहे। दक्षिण क्षेत्र के राज्यों के साथियों के एक साथ बैठ कर काम–काज का विश्लेषण, नई दिशा, नये प्रयोग के विषय में संवाद तथा भविष्य की योजना तैयार करना इस सम्मेलन का उद्देश्य था।

सर्व धर्म प्रार्थना से सम्मेलन का प्रारम्भ हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन प्रख्यात गांधीवादी चिंतक तथा रंगकर्मी श्री प्रसन्ना हेगडूजी ने किया। अध्यक्षता श्री रामचन्द्र राहीजी ने की। स्वागत भाषण कर्नाटक गांधी स्मारक निधि के अध्यक्ष डॉ. उडई पी. कृष्णजी ने किया। उद्घाटन सत्र में श्री संजय सिंह ने कहा कि गांधी स्मारक निधि की स्थापना का उद्देश्य गांधी–विचार आधारित राष्ट्र निर्माण के लिये प्रयास करना तथा रचनात्मक कार्यक्रम के जरिये राष्ट्र की सेवा करना यानी सत्य और अहिंसात्मक साधनों द्वारा पूर्ण स्वराज की स्थापना करना रहा है। आम जनता को पूरी–पूरी आजादी, प्रत्येक नागरिक को सम्मान, सुरक्षा, अधिकार, भलाई सुनिश्चित कराना तथा समाज एवं राष्ट्र अहिंसात्मक दिशा की ओर चले, गांधी मार्ग अपनाए इसके लिए प्रयत्न करना भी रहा है। परंतु आज भारत की जो परिस्थिति है वह चिंताजनक है। हिंसा, नफरत, बेरोजगारी, प्रदूषण, प्रकृत्ति के दोहन से एक विपरीत स्थिति का निर्माण हुआ है। हमें इसके समाधान के लिए अधिक सक्रिय होना होगा। अपने उद्‌बोधन में प्रसन्ना हेगडू ने कहा, "समूचा विश्व संकट में है। एक संकट पर्यावरण का है जो धरती के अस्तित्व का प्रश्न भी है। दूसरा राजनैतिक है जहां झूठ और हिंसा को प्रोत्साहित किया जा रहा है। हमें दोनों का ही समाधान करना है और गांधी ही एकमात्र विकल्प है। युवा पीढ़ी के अंदर इस कार्य के लिए चेतना जागृत करने के लिये मैं थियेटर का सहारा लेता हूं। खुद एक रंगकर्मी होने नाते महसूस करता हूं कि सहज ढंग से युवा थियेटर के माध्यम से आज की जटिल परिस्थिति को अभिव्यक्त भी करता हूं। हमें युवा वर्ग को जोड़ने के लिए कला की मदद लेनी चाहिए। अध्यक्ष रामचन्द्र राही ने कहा – "हमें साधनों से समस्याओं के समाधान की कोशिश करनी चाहिये। विकास की वर्तमान अवधारणा हिंसक है। यह प्रकृति के विनाश के साथ ही मनुष्यता को भी खत्म कर रही है। हमें मानवीय लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना के लिये सदैव संघर्ष करना होगा। समाज को आदर्श स्थिति तक ले जाने के लिये सत्य–अहिंसा हमारी बुनियाद है। राष्ट्र के चरित्र में ही हिंसा निहित है, यूक्रेन–रूस की ताजा घटनाएं सिद्ध करती हैं कि राष्ट्रवाद स्वयं हिंसा को प्रोत्साहित करता है। अतः गांधी के अंहिसात्मक प्रयोग आज भी दिशा निर्देशक हैं।

दूसरे सत्र में राज्यवार गतिविधियों की रिपोर्टिंग प्रस्तुत की गयी। तेलंगाना गांधी स्मारक निधि के सचिव रंगाराव ने तेलंगाना की मुख्य गतिविधियों – तेलुगू भाषा में गांधी साहित्य प्रकाशन, गांधी विचार प्रचार, ग्रामीण क्षेत्र में रचनात्मक कार्यक्रम आदि क्षेत्रों में किये गये कार्यक्रमों की विस्तृत जानकारी प्रस्तुत की। तमिलानाडु गांधी स्मारक निधि की ओर से सेंनिल कुमार, डॉ. नन्दाराव एवं अण्णामलाईजी तथा गांधी लिटरेचर सेन्टर के संचालक ने तमिल भाषा में गांधी साहित्य प्रकाशन, मोहल्लों में गांधी क्लब, शान्ति–कार्य हेतु युवा प्रशिक्षण, गांधी–विचार पर शोध एवं अध्ययन, मदुरै गांधी म्यूजियम की विभिन्न गतिविधियों, खादी आदि कार्यक्रमों के नवाचारों पर अपनी रिपार्ट प्रस्तुत की।

केरल गांधी स्मारक निधि के सचिव गोपाल कृष्णनजी ने स्वदेशी मेला, जैविक कृषि, खादी, प्राकृतिक चिकित्सा, स्व–सहायता समूह के जरिये ग्राम विकास तथा गांधी तत्व प्रचार एवं शांति–कार्य पर किये गये कामों पर प्रकाश डाला।

आन्ध्र प्रदेश गांधी स्मारक निधि के मंत्री ने गांधी हिल्स को लेकर अपनी योजना रखी, युवा शिविर, गांधी स्टडी सेंटर, विभिन्न सामाजिक समूहों पर जागरूकता कार्यक्रम, खादी आदि विषयों पर किये गये कार्यक्रमों पर चर्चा की। कर्नाटक गांधी स्मारक निधि के अध्यक्ष उडई पी. कृष्ण ने कन्नड भाषा में गांधी साहित्य प्रकाशन की लंबी सूची प्रस्तुत की। अनेकों युवा शिविरों, खादी–प्रदर्शनी, गांधी घरों के

प्रकाशन तिथि 28/01/2023
Delhi Postal Regd. No. DL (C)-05/1423/2022-2024
R.No.21841/1971 Posted at L.P.C.- Delhi. R.M.S.Delhi-6 on 1st, 2nd February, 2023

जरिये ग्राम विकास की कार्य प्रदर्शनी निर्माण, सामाजिक संगठनों के साथ मिलकर विभिन्न कार्यक्रम सुनियोजित कर्नाटक के हर जिले में गांधी भवन की स्थापना की प्रगति पर भी चर्चा की।

इस अवसर पर आन्ध्र प्रदेश गांधी स्मारक निधि के उपाध्यक्ष ने गांधी–विचार को लेकर भविष्य की कार्य–योजना प्रस्तुत की। रिटायर्ड हाईकोर्ट जज श्री पी. एस. नारायण ने गांधी–विचार समाज को एकमात्र विकल्प बताते हुए शिक्षा क्षेत्र में गांधी–विचार के प्रयोग पर जोर दिया। श्री कुलकर्णी ने विस्तार से पर्यावरण संकट पर प्रकाश डाला तथा गांधीवादी समाधान एंव देशभर में गांधीवादियों द्वारा इस दिशा में किये गये तथा जारी कार्य के सफल उदाहरण प्रस्तुत करते हुए भविष्य की कार्य–योजना प्रस्तुत की। प्रो. श्री बी. एस. कांटा ने स्लाईड शो के जरिये समयबद्ध ढंग से कैसे युवा पीढ़ी को जोड़ सकते हैं तथा अपनी सांगठनिक ढांचे को मजबूत कर सकते हैं, इस पर चर्चा की। श्री ए . अण्णा मलाई ने अपनी पावर–पाइंट प्रस्तुति के जरिये हमारी संस्था/संगठन की स्ट्रेंथ तथा चुनौती पर प्रकाश डाला। उन्होंने भविष्य की संभावना को भी रेखांकित किया तथा विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने के अवसर को चिन्हित किया। गांधी शांति प्रतिष्ठान के अध्यक्ष श्री कुमार प्रशान्त ने समारोपीय वक्तव्य प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि निर्भीकता से हमें समाज के हर वर्ग के साथ खड़े रहना है, हिंसा का सामना अहिंसा ही कर सकती है। देश केवल एक व्यक्ति का नहीं है, प्रत्येक, नागरिक का है। आज मानवीयता, न्याय और भाईचारा को मजबूत करना है। हम सभी समझते हैं कि इसे कौन कमजोर कर रहा है। हमारी संस्थाएं विपरीत स्थिति में भी जो कार्य कर रही हैं, दो दिन से जिनकी रिपोर्टिंग सुन रहा हूं, उसके लिये गर्व भी है और आप सभी के साहस और समर्पण के प्रति आदर भी है। युवा पीढ़ी को जोड़ने के लिये हमें हर माध्यम का प्रयोग करना है, उसमें कला भी एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। आज भारत के युवकों से बात करने के लिए उनके करीब जाना होगा। समाज के साथ हमारा जुड़ाव और मजबूत कैसे हो इस पर और गहराई से सोचना होगा। श्री हनुमान भापा (पूर्व सांसद) एवं एस. जी. सुशीला अम्मा ने भी अपने वक्तव्य प्रस्तुत किए।

सम्मेलन में तय की गयी भविष्य की कार्य योजनाएं :

(1) केरल के मंत्री श्री गोपालकृष्णनजी के आमंत्रण पर अगला दक्षिण क्षेत्रीय सम्मेलन केरल में आयोजित होगा,

(2) राष्ट्रीय युवा शिविर का आयोजन कर्नाटक में मई माह में,

(3) दक्षिण क्षेत्र में अधिक समन्वय के लिये एक टीम तैयार की जायेगी,

(4) विभिन्न स्थानों पर गांधी अध्ययन केन्द्र, युवा प्रकोष्ठ की सथापना की जायेगी,

(5) 30 जनवरी से 12 फरवरी तक समाज में सद्भावना, भाईचारा हेतु कार्यक्रम एवं गांधी–हत्या के विषय में जानकारी अधिक–से–अधिक जनता तक पहुंचाने तथा मिथ्या भ्रम को मिटाने हेतु व्यापक अभियान का प्रारम्भ करना।

इस सम्मेलन के अयोजन में डॉ. जी. वी. शिवराजू ने अथक मेहनत की। प्रारंभ से ही उन्होंने रुचि लेकर पूरे कार्यक्रम के सफल आयोजन को सुनिश्चित किया। कर्नाटक निधि के अध्यक्ष उडई पी. कृष्णप्पा, उपाध्यक्ष, एन. आर. विश्व कुमार, सचिव इंदिरा, सदस्य त्रिपण गौडा, प्रो. प्रसन्ना एवं सभी कार्यकर्ताओं ने सभी अतिथियों के लिए उत्तम व्यवस्था की। उन सभी का विशेष आभार व्यक्त करते हैं।

अंत में श्री जी. वी. शिवराजूजी द्वारा सभी के प्रति आभार व्यक्त किया गया। दिनांक 23 जनवरी को कस्तूरबा आश्रम आर्सिकरे दर्शन का एक दिन का कार्यक्रम आयोजित किया गया।

– संजय सिंह

स्वामी गांधी स्मारक निधि के लिए राजघाट, नई दिल्ली–110002 से संजय सिंह, गांधी स्मारक निधि द्वारा प्रकाशित व मुद्रित
जैन ऑफसेट प्रिंटर्स, 198/2–1, फारचुन टावर, रमेश मार्केट, नई दिल्ली–110065
सम्पादक – रामचन्द्र राही